वंदनीय माता जी का गुरुदेव से महामिलन एवं महाप्रयाण

महाशक्ति की लोकयात्रा

संतानों की पीड़ा के लगातार विषपान से वंदनीया माताजी का स्वास्थ्य जर्जर होता गया । उनकी देह निरंतर व्याधिग्रस्त होगी गई। यहां तक कि 16-20 अप्रैल 1994 को चित्रकूट में होने वाले अश्वमेध यज्ञ आयोजन में वह जाने की स्थिति में नहीं थीं। तब तक स्वास्थ्य्य काफी बिगड़ चुका था। काफी ऊहापोह था कि जाएं कि न जाएं। उनकी तबीयत को देखते हुए निकटस्थ जन भी यही सुझा रहे थे कि "माताजी ऐसे में आपको पूरी तरह से विश्राम करना चाहिए।" काफी देर वह सबकी बातें सुनती रहीं, फिर बोलीं, तबियत तो खैर जैसी है, वैसी है, पर इस बार मैं जाऊंगी। इसी बहाने फिर से चित्रकूट देखना हो जाएगा। इसके बाद कौन जाने, मेरा कहीं जाना हो या न हो। उनकी इन बातों के बाद किसी की कुछ अधिक कहने की हिम्मत नहीं

हुई। यात्रा की तैयारियां होने लगीं, निर्धारित समय पर उन्होंने जॉली ग्रांट एयरपोर्ट देहरादून से मध्य प्रदेश सरकार द्वारा भेजे गए विमान से चित्रकूट के लिए प्रस्थान किया। चित्रकूट पहुंचकर वह जैसे देह के सभी कष्टों से अनजान हो गई हों। कुछ यों जैसे कि उनकी देह उनकी न होकर किसी और की हो। इस यात्रा में उनके साथ शैल दीदी, डॉ. प्रणव पंड्या, इनके सुपुत्र चिन्मय और माताजी की मानस पुत्री दुर्गा दीदी थीं। इन सभी को वंदनीया माताजी की सभी शारीरिक पीड़ाओं का ज्ञान था। इन सबमें से किसी को उस समय अपनी आंखों पर विश्वास नहीं हो पा रहा था कि कोई इस तरह अपनी दैहिक पीड़ाओं से मुंह कैसे मोड़ सकता है। स्थितप्रज्ञ की भावदशा की बातें गीता में बहुतों ने पढ़ी-सुनी होंगी लेकिन उस समय माताजी को

देखकर सभी को इस सत्य की अनुभूति हो रही थी। इसी दशा में उन्होंने चित्रकूट अश्वमेध के सभी कार्यक्रम पूरे किए। हज़ारों श्रद्धालुओं को दीक्षा देकर उनकी मुक्ति का मार्ग खोला एवं असंख्यों पर अपने आशीषों की वर्षा की। माताजी को इस तरह कृपा-वर्षा करते हुए देखकर लग रहा था कि समस्त प्राणियों के भवरोग का हरण करने वाली कृपालु जननी ने स्वयं ही देह को रोगमुक्त कर लिया है। सबके आग्रह करने पर उन्होंने उत्साहपूर्वक तीर्थ भूमि चित्रकूट के विभिन्न स्थलों पर जाने का कार्यक्रम बनाया। कामदगिरि, स्फटिकशिला आदि स्थानों पर वह कुछ पलों के लिए भावसमाधि में डूबी रहीं। गुप्त गोदावरी के बाहर जब उनकी गाड़ी रुकीं , तो वहीं कहीं पास से 10-12 वर्ष की एक छोटी-सी बालिका भागी-भागी

“ आपको मालूम है मैंने दो दिन पहले एक सपना देखा था कि सीता मैया फिर से चित्रकूट आई हैं। जगने पर मैंने सोचा कि यदि शांतिकुंज वाली माताजी हमारी सीता मैया हैं, तो वे जरूर यहां गुप्त गोदावरी आएंगी और देखो आप आ गईं।”

आई। उसके हाथों में थोड़े से जंगली फल और कुछ पैसे थे। जब माताजी गाड़ी से उतरीं तो बालिका ठीक उनके सामने आकर खड़ी हो गई। इससे पहले कि साथ के लोग कुछ कह पाते, वह कहने लगी,

“आप शांतिकुंज वाली माताजी हो न। मैंने काफी दिनों से सुन रखा है कि शांतिकुंज, हरिद्वार से माताजी आने वाली हैं।” बालिका की भोली सी बातों के उत्तर में माताजी बोलीं, “हां बेटी ! मैं वही हूं।”

माताजी के इस कथन पर वह बालिका पुलकित हो उठी और कहने लगी,

“आपको मालूम है मैंने दो दिन पहले एक सपना देखा था कि सीता मैया फिर से चित्रकूट आई हैं। जगने पर मैंने सोचा कि यदि शांतिकुंज वाली

माताजी हमारी सीता मैया हैं, तो वे जरूर यहां गुप्त गोदावरी आएंगी और देखो आप आ गईं।"

बालिका की इस बाल-श्रद्धा पर माताजी भाव विगलित हो गईं। वह छोटी-सी बालिका कहे जा रही थी,

"मैया, मैं आपकी भिखारिन छोकरी हूँ। आज मुझे भीख में बस इतने ही पैसे मिले हैं। ये जंगली फल मैंने आपके लिए इकट्ठे किए थे, इन सबको मैं आपको देने आई हूं।

माताजी ने बालिका की यह भेंट बड़े ही भाव भरे मन से स्वीकार की। वह कुछ बोलीं तो नहीं, पर उनकी मुख मुद्रा से लगा, जैसे वे कह रही हों कि बेटी मैं तेरे लिए ही यहां गुप्त गोदावरी आई हूं। उस बालिका की यह प्यार भरी भेंट स्वीकार करने के

साथ उन्होंने उसके सिर पर अपना हाथ फेरा और बालिका चली गई।

माताजी अपने परिजनों के साथ गुप्त गोदावरी की गुफा में गईं। इसी के साथ उनका यह भ्रमण समाप्त हुआ। भव्य दीपयज्ञ के बाद में आयोजन स्थल से विदा लेकर वह शांतिकुंज आ गईं।

शांतिकुंज आने पर उनकी बीमारी फिर से यथावत् हो गई। निकटस्थजन डॉ. प्रणव पंड्या के निर्देशन में उनकी सेवा में जुट गए। विशेषज्ञ चिकित्सकों की भी सहायता ली गई। सभी के आग्रह- अनुरोध पर उन्होंने चिकित्सालय में भी भरती होना स्वीकार किया। इस क्रम में पहले वह कुछ दिन आगरा में रहीं, बाद में कुछ दिनों तक दिल्ली में भरती रहीं। चिकित्सक जो कर सकते थे, कर रहे थे। चिकित्सा विज्ञान में जो आधुनिकतम तकनीकें थीं, उन्हें

प्रयोग में लाया जा रहा था, पर उनकी बीमारी भी अनोखी थी। एक के बाद दूसरी नई बीमारी की परत खुल जाती थी। वह सभी को प्रयत्न करते, परेशान होते हुए देख रही थीं। शैल दीदी के साथ माताजी के सुपुत्र मृत्युंजय शर्मा भी प्राण-पण से अपनी जन्मदात्री मां की सेवा में जुटे थे। सभी के सारे प्रयत्न निष्फल हुए जा रहे थे। काफी दिन बीत चुकने पर उन्होंने एक दिन कहा,

"देखो तुम लोग बहुत परेशान हो चुके, अब मुझे शांतिकुंज ले चलो। जो सेवा करनी है, वहीं जाकर करते रहना।"

उन्हें देखकर सभी यह अनुभव कर रहे थे कि महामाया अपनी योगमाया समेट रही हैं। उनका आदेश मानकर सभी लोग उन्हें लेकर शांतिकुंज आ गए। वह प्रसन्न भाव से असह्य कष्ट सहे जा रही

थीं। 'यस्मिन्सिथतो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते' का गीता वाक्य उन दिनों उनके जीवन में पूरी तरह से चरितार्थ हो रहा था। इस वाक्य को समझने के लिए निम्नलिखित उदाहरण दिए जा सकते हैं :

विचलित होने का दूसरा कारण है कि लाभ तो अधिक होता हो, पर साथ में महान् दुःख हो तो मनुष्य उस लाभ से विचलित हो जाता है। जैसे, हजार रुपये मिलते हों, पर साथ में प्राणों का भी खतरा हो तो मनुष्य हज़ार रुपयों से विचलित हो जाता है। ऐसे ही मनुष्य जिस किसीस्थिति में स्थित होता है, वहाँ कोई भयंकर आफत आ जाती है तो मनुष्य उस स्थितिको छोड़ देता है। परन्तु यहाँ भगवान् कहते हैं कि बेहद स्थित होने पर योगी बड़े-से-बड़े दुःख से भी विचलित नहीं किया जा सकता जैसे किसी कारण से उसके फाँसी दे दी

जाय, शरीर के टुकड़े-टुकड़े कर दिये जायँ, आपस में भिड़ते दो पहाड़ों के बीच में शरीर दबकर पिस जाय, जीते-जी शरीर की चमड़ी उतारी जाय, शरीर में तरह-तरह के छेद किये जाएँ , उबलते हुए तेल में शरीरको डाला जाय: इस तरह के गुरुतर, महान् भयंकर दुःखों के एक साथ आने पर भी वह विचलित नहीं होता।

आत्मचेतना में स्थित होने पर देह एक छिलके से अधिक कुछ नहीं रह जाती। इस बीच माताजी को एक-दो ऑपरेशनों से भी गुजरना पड़ा था, उनके घाव अभी भरे नहीं थे लेकिन वह जैसे इन सब से परे थीं। इच्छामयी ने स्वयं की इच्छा से अपनी असंख्य संतानों का कष्ट अपने ऊपर ले लिया था। वह बच्चों की पीड़ा को अपने ऊपर लेकर प्रसन्न थीं। देह के असह्य कष्ट उनके अंतःकरण को किसी

भी तरह से छू नहीं पा रहे थे। बीमारी के इन दिनों में सभी अपने-अपने ढंग से सेवा करने में जुटे थे। रिश्ते-नातेदारों का आवागमन जारी था। शांतिकुंज, गायत्री तपोभूमि के कार्यकर्त्ता, आदरणीय पं. लीलापत जी आदि गायत्री परिवार के परिजन आदिमाता से अपनी मां के स्वास्थ्य के लिए प्रार्थना कर रहे थे। ये बड़े ही विशिष्ट क्षण थे। इन क्षणों में माताजी के दौहित्र चिन्मय एवं उनकी छोटी सुपौत्री मृणालिनी को उनके विशेष सान्निध्य का मौका मिला। छोटी-मोटी सभी सेवाओं को करते हुए ये बच्चे देर रात तक उनके पास बैठे रहते थे। कभी-कभी उनसे पूछते भी, अम्मा जी, आप कब ठीक होंगी। उत्तर में वह हंस देतीं और कहतीं, "अब क्या ठीक होना, अब तो चला-चली की वेला है।"

इस तरह की बातें सुनकर ये लोग उदास हो जाते, उन्हें समझ में नहीं आता कि वे क्या कहें और क्या करें। जिस माँ ने अनगनित बच्चों को अपनी योगशक्ति से असाध्य और जटिल रोगों से मुक्त किया,आज वही रोग शैय्या पर लेटी हुई थीं। अंतिम दिनों में सेवा करते हुए बातों के क्रम में एक रात्रि चिन्मय ने माताजी से पूछा,

"अम्मा जी, आपने तो बहुत सारे लोगों के कष्टों को अपने ऊपर लिया है, क्या ऐसा नहीं हो सकता कि कोई आपका कष्ट अपने ऊपर ले ले।"

उत्तर में माताजी मुस्कराने लगीं, थोड़ी देर रुककर धीरे से बोलीं,

"अपनी संतानों के कष्ट मां अपने ऊपर लेती है। माता के कष्ट को भला बच्चे क्यों अपने ऊपर लेने लगें और कोई ऐसा करना भी चाहे, तो क्या मैं उसे

करने दूंगी। मेरे जीवित रहते मेरी संतानें कष्ट उठाएं, यह किसी भी तरह संभव नहीं हो सकता।”

असह्य एवं असीमित पीड़ा के इन क्षणों में उनका वात्सल्य पहले की तुलना में और भी बढ़ गया था। जो पास में थे, उन्हें तो वह दुलार करती ही थीं लेकिन जो पास में नहीं थे, उनके बारे में भी वह पूछताछ करती रहती थीं। उनका हाल- समाचार लेती रहती थीं। वात्सल्य का वितरण करती भावमयी मां ने अपनी इस बीमारी को एक विशिष्ट योग-साधना बना लिया था। इस साधना को करते हुए उनके प्राण अपने आराध्य में महामिलन के लिए महाप्रयाण करने की तैयारी में लगे थे।

“अपनी संतानों के कष्ट मां अपने ऊपर लेती है। माता के कष्ट को भला बच्चे क्यों अपने ऊपर लेने लगें और कोई ऐसा करना भी चाहे, तो क्या मैं उसे करने दूंगी। मेरे जीवित रहते मेरी संतानें कष्ट उठाएं, यह किसी भी तरह संभव नहीं हो सकता।”

महामिलन के लिए महाप्रयाण की तैयारी

वंदनीया माताजी के मन में अपनी असंख्य संतानों के प्रति गहरी आकुलता थी। वे जानती थीं कि उनके इस तरह चले जाने से उनके बच्चे बिलख उठेंगे लेकिन किया क्या जाए? देह छोड़ने की भी अनिवार्यता थी । परमपूज्य गुरुदेव के संकेत उन्हें बार-बार मिल रहे थे। इन संकेतों में एक ही स्वर निहित था,

"सब बच्चे अब परिपक्व हो चले हैं, उन्हें अब अपने पांवों पर खड़े होने देना चाहिए। अब आपको स्थूल कलेवर छोड़कर यहां सूक्ष्म जगत् में आकर तप करना चाहिए। विश्व कल्याण के लिए यह ज्यादा अनिवार्य है।"

गुरुदेव के इन सांकेतिक स्वरों को माताजी पिछले कई महीनों से लगातार अनुभव कर रही थीं। उनका स्वयं का मन-अंतःकरण भी गुरुदेव के लिए हमेशा विकल रहता था लेकिन उनकी यह निजी विकलता सदा ही उनके सहज मातृत्व से ढक जाती थी। उनका मातृभाव अन्य सभी भावों पर छा जाता था।

इन पंक्तियों को लिखते समय यह अच्छी तरह याद आ रहा है कि श्रद्धांजलि समारोह के बाद वर्ष 1991 के मई महीने में माताजी ब्रह्मवर्चस आई थीं। दोपहर के बाद का समय होगा। ब्रह्मवर्चस में बनी हुई यज्ञशाला के सामने छाया आ गई थी। वहीं पर उन्होंने कुर्सी डलवाई और बैठ गईं। यहां रहने वाले सभी कार्यकर्त्ता भाई-बहन उनके इर्द-गिर्द खड़े हो

गए। उन्होंने एक-एक करके सभी का हालचाल पूछा। फिर बातों-बातों में बोलीं,

“मैंने तो श्रद्धांजलि समारोह के बाद ही चले जाने का मन बना लिया था। सोचा था, जिन्हें अपनी हर सांस अर्पण की, उनके चले जाने के बाद मेरा एक ही कर्त्तव्य- कार्य शेष बचता है कि उन्हें अपनी ओर से, तुम सबकी ओर से श्रद्धांजलि दे दूं। इसके बाद वहीं चली जाऊं, जहां वे स्वयं हैं, पर प्रणव नहीं माने, कहने लगे माताजी अभी तो हम लोग गुरुदेव के न रहने की पीड़ा से ही नहीं उबर पाए हैं, आप भी चली जाएंगी तो हम सबके क्या हाल होंगे। हमें भी लगा कि ये ठीक ही कह रहे हैं, इसलिए सोच लिया है कि तुम सब लोगों के लिए मैं अभी तीन-सवा तीन साल और रहूंगी।”

संतानों की जिस चिंता के कारण वंदनीय माताजी ने इन वर्षों में अपनी देह को टिकाए रखा, वह चिंता उन्हें देह छोड़ने से पहले भी थी। उनके सामने कभी भी प्रश्न यह नहीं था कि मिशन किस तरह से चलेगा क्योंकि यह सच्चाई वे अच्छी तरह से जानती थीं और इसे वह सभी को समय-समय पर बताया करती थीं कि

"इस मिशन को चलाने वाला भगवान् है। यह भगवान् के संकल्प के अनुसार स्वयं चलता रहेगा और ठीक तरह से चलता रहेगा। इसकी जड़ों में गुरुजी की इतनी अधिक तप ऊर्जा लगी है, कि यह कभी भी किसी भी स्थिति में बिगड़ेगा नहीं। हां इसे थोड़ा-सा भी बिगाड़ने का प्रयास करने वाले अवश्य ही बिगड़ जाएंगे।"

"इस मिशन को चलाने वाला भगवान् है। यह भगवान् के संकल्प के अनुसार स्वयं चलता रहेगा और ठीक तरह से चलता रहेगा। इसकी जड़ों में गुरुजी की इतनी अधिक तप ऊर्जा लगी है, कि यह कभी भी किसी भी स्थिति में बिगड़ेगा नहीं। "

माताजी चाहती यह थीं कि जिस प्यार की डोर में उन्होंने जीवन भर समूचे गायत्री परिवार को बांधकर रखा, वह डोर वैसी ही मजबूत बनी रहे। इसी कारण उन्होंने महाप्रयाण से कुछ दिन पूर्व शांतिकुंज के सभी वरिष्ठ कार्यकर्त्ताओं को एक-एक करके बुलाया। उनकी निजी जिंदगी की बातें पूछीं, उन्हें दिलासा दी और फिर यह कर्त्तव्य याद दिलाया और कहा,

"तुम लोग बड़े हो, यदि तुम्हारे छोटे भाई-बहन कोई गलती करें तो उन्हें समझाओ, थोड़ा-बहुत डांटो भी लेकिन उन्हें अपने गले से लगाकर रखो। उन्हें किसी भी तरह प्यार की कमी महसूस न होने दो। किसी को यह न लगे कि हम तो अपने मां-बाप को छोड़कर, अपने घर को छोड़कर आ गए। अब यहां हमारा कोई अपना नहीं।"

इस तरह सबको समझाने-बुझाने के बाद उन्होंने एक बात अपने बारे में कही। वह बोलीं, "मैंने मनुष्य देह जरूर धारण की है लेकिन तुम लोग मुझे केवल मनुष्य न समझना। देखो गंगाजी के पानी में चांद की परछाई देखकर छोटी-छोटी मछलियां आनंद से उसके इर्द-गिर्द उछल-कूदकर खेलने लगती हैं, सोचती हैं, यह हमीं में से एक है, पर सुबह जब चांद डूब जाता है, तो उनकी पहले जैसी दशा हो जाती है। उछल-कूद के बाद शिथिलता आ जाती है। वे सब कुछ भी नहीं समझ पातीं।”

इन शब्दों में माताजी ने सभी को संकेत में अपना स्वरूप बोध कराया। ताकि जो लोग लंबे समय तक उनके साथ रहे, वे समझ सकें कि वह कौन हैं।

मछलियों का उदाहरण एक बहुत वैज्ञानिक तथ्य है। पूर्णिमा के दिनों में जब चाँद अपने यौवन पर होता है तो मछलियाँ बहुत सक्रीय होती हैं, उनमें बहुत ही एनर्जी होती है। Biologists इस तथ्य पर काफी रिसर्च कर रहे हैं कि Full moon के दिनों में चाँद का दूधिया प्रकाश मछलियों को आकर्षित करती है यां जवारभाटा।

सभी को इस तरह समझाकर वह मौन हो गईं, साथ ही उन्होंने "कतिपय विशिष्ट यौगिक क्रियाओं" के द्वारा अपनी आत्मचेतना को देह से हटाना शुरू कर दिया। इसी के साथ क्रमिक रूप से उनका देह-बोध शून्य होने लगा। बीतते पलों के साथ वह घड़ी भी आ गई जिसे वंदनीय माताजी ने   अपने प्रभु से महामिलन के लिए निश्चित किया था। भाद्रपद पूर्णिमा 19 सितम्बर, 1994 को प्रातः सभी को

उनके मुखमंडल पर एक अनोखा भावांतर नजर आया। जिस कक्ष में वह लेटी हुई थीं, वहां का वातावरण पिछले दिनों की तुलना में एकदम बदला हुआ नज़र आया। दिव्य सूक्ष्म स्पंदन वहां सघन हो उठे। ऐसा लगने लगा कि सभी देव शक्तियां उनके इर्द-गिर्द उपस्थित हो गई हैं। बिना किसी कृत्रिम साधन के वहां एक दिव्य सुगंध फैल गई। इसे वहां उपस्थित सभी लोगों ने अनुभव किया। अपने गहन मौन में लीन माताजी प्रातः से ही ध्यानस्थ थीं। मुखमंडल पर प्रदीप्त आभा से, कुछ को यह भी लग रहा था कि माताजी आज पहले से कहीं अधिक स्वस्थ हैं। एक अर्थ में यह सोचना सही भी था, क्योंकि अन्य दिनों की तुलना में वह आज पहले से ज्यादा अपने स्व: में स्थित हो गई थीं। वातावरण में सब ओर सर्वत्र एक गहन सन्नाटा हिलोरें ले रहा

था। सब लोग यंत्र के समान काम-काज किए जा रहे थे। किसी को कुछ सूझ नहीं रहा था। ध्यानस्थ माताजी मूर्तिमयी प्रशांति के रूप में विराज रही थीं। उनके मुखमंडल पर एक अनिवर्चनीय शांति और आनंद की दीप्ति खेल रही थी। महाकाली मानो महाकाल के ध्यान में मग्न हो रही थीं। इन पलों में साक्षी हुए लोग अपूर्व सौभाग्यशाली थे। सौभाग्य का कुछ अंश उन्हें भी मिला था जो पिछले कुछ महीनों से हर दिन अपनी आत्मचेतना को एकाग्र करके अपनी प्रिय मां को अपना भक्तिपूर्ण प्रणाम निवेदित करते थे, मां के चले जाने के अहसास को अनुभव कर जिनकी सिसकियां थमती नहीं थीं। इन क्षणों में भी उनकी ध्यानस्थ चेतना मां के चरणों में अपनी भावांजलि अर्पित कर रही थी।

अद्भुत अनुभूति:

11 बजकर 40 मिंट पर पर ध्यानस्थ जनों के ध्यान में एक दृश्य बड़ी ही स्पष्ट रीति से उभरा। इस अद्भुत अनुभूति में उन्होंने अनुभव किया कि परमपूज्य गुरुदेव अपनी लीला संगिनी को अमरधाम में लेने के लिए आए हैं। अनेकों देवशक्तियां, सूक्ष्मलोक के ऋषिगण उन्हें घेरे हुए हैं। सभी की दृष्टि माताजी पर टिकी है।

क्षण बीते 11:50 पर माताजी की स्थूल देह हल्के से कंपित हुई और माता आदिशक्ति अपने परम पुरुष पुरुषोत्तम के साथ विराजमान हो गईं। हृदय-हृदय में वेदना की रागिनी बज उठी। समूचे कक्ष में निष्कंप- स्तब्धता उतर आई। इस स्तब्धता (अचलता) ने भी बड़ी अनोखी रीति से इस सत्य का संचार कर दिया कि माता भगवती महाकाली

भगवान् महाकाल से महामिलन के लिए महाप्रयाण कर चुकी हैं। उनकी तपःपूत देह के अंतिम दर्शन के लिए शिष्यों भक्तों वे संतानों की भीड़ लग गई। लगभग 24 घंटे तक अंतिम दर्शन का सिलसिला चलता रहा। अगले दिन यानि कि 20 सितंबर 1994 को महाशक्ति की आवास बनी उनकी स्थूल देह चिता-अग्नि के तेज में विलीन हो गई। नित्यप्रति अपने बच्चों को दर्शन देने वाली माता अब ध्यानगम्य हो गईं। हां बच्चों को दिए गए मां के आश्वासन के स्वरों की गूंज अभी भी थी।

वर्ष 1994 का वीडियो लिंक